eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

कबीर का भाषिक चिंतन

[1]सुगंधि गुप्ता
[1]शोधार्थी गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर

Received: 17 Dec 2023, Accepted: 15 January 2024, Published online: 01 February 2024

Abstract

भाषा पर कबीर का पूर्ण रूप से अधिकार था। अपने अनुरूप भाषा को तोड़ने–मरोड़ने की क्षमता उनके भीतर थी। आज के आधुनिक युग में भी कबीर की भाषा सार्थक सिद्ध होती है। उनकी भाषा में अनेक भाषाओं के तत्वों का मिश्रण है। लोक जन की भाषा को आधार बनाकर ही उन्होनें समाज में फैली कुरीतियों को खत्म करने का कार्य किया। एक सच्चे क्रांतिकारी के रूप में समाज को जागृत करने और सुधारने में उन्होंने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। पढ़े लिखे न होने के बावजूद जितना ज्ञान उन्हें था उसे नकारा नहीं जा सकता है। प्रत्येक मनुष्य को जगाने का और सुधारने का ठेका लेकर कबीर समाज को बनावटी पन से दूर रखने के पक्ष में थे। जितनी सरलता, सहजता, प्रखरता कबीर की भाषा में थी वह सर्वोपरि है उसे बदला नहीं जा सकता।

बीजशब्द : भाषा, सरलता, सहजता, वाणी, भावों, लोकभाषा, समाज सेवक, समाज सुधारक, सहदयता।

Introduction

भाषा का मनुष्य के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। भाषा के अभाव में जीवन यापन करना सम्भव नहीं है। एक मनुष्य अपने ज्ञान को दूसरों तक पहँचाने के लिए और दूसरों से ज्ञान प्राप्त करने के लिए भाषा का सहारा लेता है। भाषा में प्रत्येक शब्द का कोई न कोई निश्चित अर्थ रहता है जिसके कारण ही भाषा व्यक्ति के लिए ओर अधिक महत्त्वपूर्ण साबित होती है। पुष्पपाल सिंह भाषा के विषय में लिखते है ''भाषा भावों को प्रकट करने का साधन है। यदि भाव साध्य है तो भाषा साधन है। साध्य की उपयुक्ता तभी सम्भव है, जब साधन भी उसके अनुरूप हो। इसी प्रकार भावों की गरिमा तभी प्रकट हो सकती है, जब उस महिमा को वहन करने की पूर्ण शक्ति भाषा में हो।''[1]

एक रचनाकार, साहित्यकार की भाषा लोक जन की भाषा से भिन्न होती है। रचनाकार लोक जन की भाषा के शब्दों का ऐसा प्रयोग करता है कि उसमें भावनात्मकता उभर कर सामने आने लगती है। साहित्य से जुड़ा हुआ प्रत्येक व्यक्ति भाषा के महत्तव को और रचनाकार की अनुभूतियों को भलि–भान्ति समझता है। सियाराम तिवारी के शब्दों में कहा जाए तो ''काव्य भाषा सामान्य भाषा से उसी प्रकार पृथक है जिस प्रकार लहर जल से भिन्न है, इस तरह काव्य भाषा सामान्य भाषा के भीतर की भाषा है।''[2] भाषा एक माध्यम है जो सबको बांधकर रखने का कार्य करती है। भाषा के अभाव में मनुष्य का व्यवहार पूर्ण नहीं हो सकता है।

मध्यकालीन संतों में कबीर का एक विशिष्ट स्थान है लेकिन इस बात को नकारा नहीं जा सकता कि वह अपने समय से बहुत आगे का सोचने वाले थे। जो सरलता, प्रखरता, स्पष्टता कबीर की वाणी में मिलती है वह मध्यकाल के किसी अन्य कवि में या संत में नहीं मिलती है। भाषा का प्रयोग तो सभी करते है लेकिन विशेष अर्थ में प्रयोग करके मनुष्य को उसके भावों के साथ जोड़ने का

©IJARMS JOURNAL, 2024

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

कार्य कबीर ने भली–भान्ति किया है। उन्होंने अपनी भाषा में जिस सरलता और सहजता का प्रयोग किया है उससे यह ज्ञात होता हैं कि वह ज्ञान के मर्मज्ञ थे। कबीर का उद्देश्य काव्य रचना करना नहीं था बल्कि मानव के हित की रक्षा करना था। काव्य के नियमों से वह अपरिचित थे। अपने भावों को व्यक्त करने के लिए वह जो कहते थे वह काव्य बन जाता था।

भाषा पर अधिकार रखने वाले कबीर की भाषा के विषय में भी विद्धानों के बीच मतभेद है। कोई उनका पक्ष लेता है तो कोई उनके विपक्ष में खड़ा नजर आता है। डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार ''कबीर के काव्य का व्याकरण पूर्वी हिन्दी रूप ही लिए हुए है उसमें स्थान–स्थान पर पंजाबी प्रभाव अवश्य दुष्टिगोचर होता है।''3 डॉ. नगेन्द्र का मानना है कि ''अक्षर ब्रह्म के परम साधक कबीरदास सामान्य अक्षरज्ञान से रहित थे।''[4] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मत है कि ''यद्यपि वह पढ़े लिखे नहीं थे पर उनकी प्रतिभा बड़ी प्रखर थी जिससे उनके मुहँ से बड़ी चुटीली और व्यग्ंय चमत्कारपूर्ण बात निकलती थी। उनकी पंक्तियों में विरोध और असंभव का चमत्कार लोगों को बहुत आकर्षित करता था।''[5] हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में कहा जाए तो उनका मानना था कि कबीर की भाषा पर व्याकरण की दृष्टि से विचार करना महत्तवपूर्ण नहीं है। कबीर की भाषा के आधार पर वह उनकी अभिव्यक्ति की क्षमता की सराहना करते हुए कहते है कि ''भाषा पर कबीर का जबर्दस्त अधिकार था। वे वाणी के डिक्टेटर थे। जिस बात को उन्होंने जिस रूप में प्रकट करना चाहा है, उसे उसी रूप में भाषा से कहलवा लिया है। बन गया है तो सीधे–सीधे नहीं तो दरेरा देकर। भाषा कुछ कबीर के सामने लाचार सी नज़र आती है। उसमें मानों ऐसी हिम्मत नहीं है कि इस लापरवाह फक्कड़ की किसी फरमाइश को नाहीं कर सके।''[6]

इसमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं है कि कबीर की सहदयता और संवेदनशीलता ने उनकी भाषा को प्रभावशाली बनाने का कार्य किया है। वह एक ऐसे युग में जन्में थे जहॉ साधनों की भरमार नहीं थी जिसके फलस्वरूप ही उनकी भाषा में परिष्कार दुष्टिगत नहीं होता है। अनेक स्थानों पर जाकर वह मनुष्यों को जागृत करकर उनके भीतर सुधार करते नज़र आते है। भाषा को उन्होंने कभी प्राथमिकता दी ही नहीं वह जहां जाते थे वहां से शब्दों को ग्रहण कर लेते थे जिसके फलस्वरूप ही उनकी भाषा में अनेक भाषा के शब्दों का मेल नजर आता है। ''भाषा बहुत परिष्कृत और परिमार्जित न होने पर भी कबीर की उक्तियों में कही–कही विलक्ष्ण प्रभाव और चमत्कार है। प्रतिभा उनमें बड़ी प्रखर थी इसमें सन्देह नहीं।''[7]

लोक जन की भाषा ही उनके काव्य की भाषा थी। वह न तो लिखना जानते थे और न ही किसी लिखे पर विश्वास करते थे। उन्होंने केवल व्यक्तिगत आचरण और साधना को महत्तवपूर्ण माना। सरनामसिंह शर्मा के शब्दों में कहा जा सकता है कि ''कबीर ने जिस वाणी को स्वीकार किया वह किसी विशेष भू–भाग या वर्ग की भाषा नहीं थी। उसमें लोकतन्त्रीय गुण थे। वह मध्य देश की भाषा होते हुए भी थोड़े से हेर–फेर के साथ देश में दूर–दूर तक बोली जाती थी। कबीर ने वाणी को ब्रज और खड़ी बोली, पूर्वी–पंजाबी, राजस्थानी आदि बोलियों ने बहुत सहयोग दिया है।''[8] मनुष्यों को भटके हुए मार्ग से सही मार्ग पर लाने के लिए कबीर ने बहुत प्रत्यन किए। जगह–जगह

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

घूम–घूमकर कबीर ने अपने धार्मिक सिद्धान्तों को जन भाषा में व्यक्त किया। कबीर की भाषा में अलंकार, छंद, प्रतीक, मुहावरे आदि का प्रयोग नजर आता है।

नाथों और सिद्धों की भाषा का प्रभाव तो कबीर पर पड़ा लेकिन यह कहना उचित नहीं है कि कबीर ने उनकी भाषा को अपनाया। सरनामसिंह का मानना है कि ''सिद्धों की भाषा गुमराह करने वाली थी और कबीर की भाषा राह दिखाने वाली थी।''[9] नाथ पंथ का पंचार पंजाब और राज्यस्थान की और अधिक था इसलिए कबीर की भाषा पर पंजाब और राज्यस्थान की भाषा का प्रभाव अधिक देखा जा सकता है। कबीर की भाषा की विशेषता यह है कि वह जिससे बात करते है उसकी भाषा के अनुरूप स्वंय की भाषा को डाल लेते है। हिन्दू से बात करते हुए हिन्दूपन और मुस्लमान से बात करते हुए मुस्लमानी पन उनकी भाषा में उभरकर सामने आता है। वह अपने दोहों के माध्यम से इस बात को प्रस्तुत करते है।

''सोई आखर सोई वयण
जन जुजुवा चंबत
कोई एक मैले लवनि
अमिय रसायन हुंत।''[10]

वही अक्षर होते है, वही वाणी होती है लेकिन उसका प्रयोग भिन्न–भिन्न तरह से किया जाता है। कोई कवि उन अक्षरों और वाणियों में लावण्य उत्पन्न कर देता है और कोई उन्हें रसायनमयी बना देता है। कबीर का मानना है कि व्यक्ति को बाहरी आडम्बरों का विरोध करके अपने मन के भीतर झांकना होगा तभी वह इस संसार रूपी बंधन से पार हो सकता है। कबीर कहते है ''मुझकों तूँ क्या ढूँढ़े मैं तो तेरे पास में''[11]

इस प्रकार देखा जाए तो कबीर एक ऐसे कवि थे जिनकी भाषा का प्रभाव आज के इस दौर में भी देखा जा रहा है। केवल कल्पना को आधार न बनाकर यथार्थ को अपनाकर समाज को सुधारने का और सही राह पर अग्रसर करने का दायित्व लेते हुए कबीर ने समाज में क्रांति लाने का कार्य किया है।''मस्ती, फक्कड़ाना स्वभाव और सब कुछ को झाड़–फटकार कर चल देने वाले तेज ने कबीर को हिन्दी साहित्य का अद्धितीय व्यक्ति बना दिया है।''[12] वह एक युग पारखी है। अपने व्यवहार के कारण वह जन–जन में लोकप्रिय बने और लोगों का उनके प्रति प्रेम जागृत हुआ। एक कवि के लिए इससे बड़ी उपलब्धि कुछ ओर नहीं हो सकती कि उसकी भाषा में दिया ज्ञान प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में महत्त्वपूर्ण बनकर उभरे और उन्हें समाज में लड़ने की शक्ति प्रधान करे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचि :–

1. सिंह पृष्पपाल, कबीर ग्रन्थावली, नमन प्रकाशन, दिल्ली, 2010, पृष्ठ 74
2. तिवारी सियाराम, काव्यभाषा, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2015, प्रस्तावना
3. वर्मा रामकुमार, सन्त कबीर, साहित्य भवन, इलाहाबाद, 1957, पृष्ठ 22
4. नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 2000, पृष्ठ 120
5. शुक्ल रामचन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, ज्योति पब्लिशर्स, उत्तर प्रदेश, 2013, पृष्ठ 8

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

6. द्विवेदी हजारी प्रसाद, कबीर, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1971, पृष्ठ 216
7. शुक्ल रामचन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, ज्योति पब्लिशर्स, उत्तर प्रदेश, 2013, पृष्ठ 80
8. शर्मा सरनाम सिंह, कबीर वाणी, रंजन प्रकाशन, आगरा, 1972, पृष्ठ 07
9. सिंह पृष्पपाल, कबीर ग्रन्थावली, नमन प्रकाशन, दिल्ली, 2010, पृष्ठ 74
10. तिवारी पारसनाथ, कबीर ग्रन्थावली, बंसल प्रेस, इलाहाबाद, 1961
11. शुक्ल रामचन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, ज्योति पब्लिशर्स, उत्तर प्रदेश, 2013, पृष्ठ 83
12. द्विवेदी हजारी प्रसाद, कबीर, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1971, पृष्ठ 222